जम्मू और कश्मीर राज्य एवं अन्य

बनाम

ठाकुर गंगा सिंह एवं अन्य

(बी. पी. सिन्हा, मुख्य न्यायाधीश; पी. बी. गजेंद्रगडकर,
के. सुब्बा राव, के. सी. दास गुप्ता और जे. सी. शाह, न्यायाधीश)

सुप्रीम कोर्ट, अपीलीय क्षेत्राधिकार–अपील के लिए विशेष अनुमति–यह कब दी जा सकती है–संविधान की व्याख्या से संबंधित विधि का सारवान प्रश्न–इसका अर्थ–भारत का संविधान, अनुच्छेद 132(2)

उत्तरदाताओं ने जम्मू और कश्मीर मोटर वाहन नियमों के नियम 4-47 की वैधता को चुनौती देते हुए जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की। उच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि उक्त नियम संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करने के कारण 'अधिकार-बाह्य' था। अपीलकर्ताओं ने संविधान के अनुच्छेद 132(1) के तहत प्रमाण पत्र प्राप्त करने के लिए उच्च न्यायालय में एक आवेदन दायर किया, जिसे इस आधार पर अस्वीकृत कर दिया गया कि इस मामले में संविधान की व्याख्या से संबंधित विधि का कोई सारवान प्रश्न अंतर्निहित नहीं था। तत्पश्चात्, अपीलकर्ता ने संविधान के अनुच्छेद 132(2) के तहत 'विशेष अनुमति' के लिए इस न्यायालय में आवेदन किया, जिसे इस शर्त के साथ स्वीकार कर लिया गया कि उत्तरदाताओं को अपील की ग्राह्यता का प्रश्न उठाने की स्वतंत्रता होगी। संविधान के अनुच्छेद 14 की व्याख्या के संबंध में पक्षों के बीच कोई विवाद नहीं था, और विवाद का केंद्र-बिंदु यह प्रश्न था कि क्या विवादित नियम 'युक्तियुक्त वर्गीकरण' की कसौटी पर खरा उतरता है। उत्तरदाताओं ने एक प्रारंभिक आपत्ति उठाई कि संविधान के अनुच्छेद 132(2) के तहत विशेष अनुमति इस न्यायालय द्वारा केवल तभी प्रदान की जा सकती है, जब न्यायालय इस बात से संतुष्ट हो कि मामले में संविधान की व्याख्या से संबंधित विधि का कोई सारवान प्रश्न अंतर्निहित है; और चूंकि, प्रस्तुत मामले में, इस न्यायालय के निर्णयों की एक श्रृंखला के कारण संविधान के अनुच्छेद 14 की व्याख्या विवाद का विषय नहीं थी, और विचारार्थ विधि का कोई प्रश्न–सारवान प्रश्न की तो बात ही दूर–उत्पन्न नहीं हो सकता था, अतः उक्त अनुच्छेद के तहत कोई विशेष अनुमति प्रदान नहीं की जा सकती थी।

अपील करने वालों की तरफ से यह दलील दी गई कि जब भी क्लासिफिकेशन का सवाल उठाया गया, जिसमें अपने आप में संविधान के आर्टिकल 14 का मतलब शामिल था, जहां तक सवाल वाले क्लासिफिकेशन का सवाल था,

अभिनिर्धारित - संविधान के अनुच्छेद 132(2) के पीछे मूल सिद्धांत यह है कि संविधान की व्याख्या करने का अंतिम अधिकार सर्वोच्च न्यायालय के पास ही होना चाहिए। इसी उद्देश्य से, इस अनुच्छेद को अनुच्छेद 133 और 134 के तहत लगाई गई अन्य सीमाओं से मुक्त रखा गया है; और ऐसे मामलों में, जिनमें संविधान की व्याख्या से संबंधित केवल 'विधि का कोई सारवान प्रश्न' निहित हो, अपील का अधिकार अत्यंत व्यापक रूप में प्रदान किया गया है–भले ही उस मामले की कार्यवाही की प्रकृति कुछ भी हो।

किसी प्रावधान की व्याख्या का अर्थ वह तरीका है, जिसके द्वारा किसी शब्द का सही भाव या अर्थ

समझा जाता है। जहाँ पक्षकार किसी प्रावधान की सही व्याख्या पर सहमत होते हैं, या उसके संबंध में कोई प्रश्न नहीं उठाते, वहाँ मामले में संविधान की व्याख्या से संबंधित कोई कानूनी प्रश्न शामिल नहीं होता। कानून का कोई सारवान प्रश्न वहाँ उत्पन्न नहीं हो सकता, जहाँ उस कानून पर इस न्यायालय द्वारा अंतिम और प्रामाणिक रूप से निर्णय दिया जा चुका हो।

प्रस्तुत मामले में, उठाया गया प्रश्न संविधान की व्याख्या से संबंधित विधि का कोई प्रश्न अंतर्ग्रस्त नहीं करता है।

टी.आई.एम. कृष्णास्वामी पिल्लई बनाम. गवर्नर जनरल-इन-काउंसिल (1947) 52 सी.डब्ल्यू.एन. (एफ.आर.) आई, भुदन चौधरी बनाम बिहार राज्य (1955) आई एस.सी.आर. 1045, चिरंजीत लाल चौधरी बनाम यूनियन ऑफ इंडिया, (1950) एस.सी.आर. 869, राम कृष्ण डालमिया बनाम जस्टिस तेंडुलकर, [1959] एस.सी.आर. 279 और मोहम्मद हनीफ कुयरेशी बनाम बिहार राज्य, [1959] एस.सी.आर. 629, पर भरोसा किया गया।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील सं. 217/1959.

जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय के दिनांक 20 जून, 1958 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध, रिट याचिका संख्या 108/1958 में, विशेष अनुमति द्वारा अपील।

अपीलकर्ताओं की ओर से: एच. एन. सान्याल (भारत के अतिरिक्त सॉलिसिटर-जनरल), एन. एस. बिंद्रा, आर. एच. ढेहर और टी. एम. सेन अधिवक्तागण।

उत्तरदाताओं की ओर से: आर. के. गर्ग और एम. के. राममूर्ति, एस. एन. एंडले, जे. बी. दादाचांजी, रामेश्वर नाथ और पी. एल. वोल्वा अधिवक्तागण।

1959. 26 नवंबर. कोर्ट का फैसला सुनाया गया ।

सुब्बा राव, जे.–विशेष अनुमति द्वारा की गई यह अपील, संविधान के अनुच्छेद 132(2) के दायरे से संबंधित प्रश्न उठाती है।

पहले उत्तरदाता, दूसरे उत्तरदाता, मेसर्स जम्मू कश्मीर मैकेनिक्स एंड ट्रांसपोर्ट वर्कर्स को-ऑपरेटिव सोसाइटी लिमिटेड जम्मू (जिसे इसके बाद 'सोसाइटी' कहा जाएगा) के शेयरधारकों में से एक हैं। सोसाइटी का पंजीकरण जम्मू और कश्मीर सहकारी सोसाइटी अधिनियम संख्या 6, 1993 (विक्रमी) के तहत किया गया था। उन्होंने तीसरे अपीलकर्ता के समक्ष जम्मू और कश्मीर राज्य के विभिन्न मार्गों के लिए 'स्टेज कैरिज' और 'पब्लिक कैरियर' परमिट जारी करने हेतु कई आवेदन प्रस्तुत किए, लेकिन उन्हें कोई परमिट इस आधार पर जारी नहीं किया गया कि जम्मू और कश्मीर मोटर वाहन नियमों (जिन्हें इसके बाद 'नियम' कहा जाएगा) के नियम 4-47 के तहत, सेवा लाइसेंस केवल ऐसे व्यक्ति को जारी किया जा सकता है जो जम्मू और कश्मीर का निवासी हो, या ऐसी कंपनी को जो भागीदारी अधिनियम के तहत पंजीकृत हो; और यह कि, चूंकि सोसाइटी न तो कोई व्यक्ति थी और न ही कोई भागीदारी फर्म, इसलिए वह इन नियमों के तहत लाइसेंस प्राप्त करने की हकदार नहीं थी। प्रतिवादियों ने जम्मू और कश्मीर

उच्च न्यायालय में, जम्मू और कश्मीर संविधान की धारा 103 के तहत एक याचिका दायर की, जिसमें नियमों के नियम 4-47 की वैधता को चुनौती दी गई थी। उस याचिका में, वर्तमान अपीलकर्ताओं–अर्थात् जम्मू और कश्मीर राज्य सरकार, परिवहन मंत्री, पंजीकरण प्राधिकारी और यातायात अधीक्षक–को उत्तरदाता पक्ष बनाया गया था। उच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि उक्त नियम 'अल्ट्रा वायर्स' (अधिकार-बाह्य) है, क्योंकि यह संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है; और इस निष्कर्ष के आधार पर, न्यायालय ने वर्तमान अपीलकर्ताओं के विरुद्ध एक 'रिट ऑफ मैंडमस' (परमादेश) जारी करने का निर्देश दिया, जिसके द्वारा उन्हें उक्त नियम के प्रावधानों को लागू करने से रोका गया। अपीलकर्ताओं ने संविधान के अनुच्छेद 132(1) के तहत प्रमाण पत्र प्राप्त करने हेतु उच्च न्यायालय में एक आवेदन प्रस्तुत किया, किंतु उच्च न्यायालय ने इस आधार पर उसे अस्वीकार कर दिया कि इस मामले में संविधान की व्याख्या से संबंधित विधि का कोई सारवान प्रश्न अंतर्निहित नहीं था। तत्पश्चात्, अपीलकर्ताओं ने संविधान के अनुच्छेद 132(2) के तहत 'विशेष अनुमति' के लिए आवेदन किया, जिसे इस न्यायालय द्वारा प्रदान कर दिया गया। विशेष अनुमति प्रदान करने वाले आदेश में, वर्तमान प्रतिवादियों को यह स्पष्ट स्वतंत्रता प्रदान की गई थी कि वे अपील की अंतिम सुनवाई के दौरान, अपील की ग्राह्यता से संबंधित प्रश्न को उठा सकते हैं।

उत्तरदाताओं की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने अपील की स्वीकार्यता पर एक प्रारंभिक आपत्ति उठाई है। संक्षेप में उनकी आपत्ति यह है कि संविधान के अनुच्छेद 132(2) के तहत विशेष अनुमति केवल तभी दी जा सकती है, जब सर्वोच्च न्यायालय इस बात से संतुष्ट हो कि मामले में संविधान की व्याख्या से संबंधित विधि का कोई सारवान प्रश्न निहित है; कि प्रस्तुत मामले में संविधान के अनुच्छेद 14 की व्याख्या इस न्यायालय के निर्णयों की एक श्रृंखला द्वारा भली-भांति स्थापित और विवाद से परे हो चुकी है; कि, इसलिए, संविधान की व्याख्या से संबंधित विधि का कोई प्रश्न–और उस विषय के संबंध में विधि का कोई सारवान प्रश्न तो बिल्कुल भी नहीं–विचारार्थ उत्पन्न नहीं होता है; और कि, इसलिए, उक्त अनुच्छेद के तहत कोई विशेष अनुमति प्रदान नहीं की जा सकती है।

इस तर्क का जवाब माननीय अतिरिक्त सॉलिसिटर-जनरल ने इस प्रकार दिया है: जब भी वर्गीकरण का कोई प्रश्न उठता है, तो इसमें विवादित वर्गीकरण के संदर्भ में संविधान के अनुच्छेद 14 की व्याख्या शामिल होती है। दूसरे शब्दों में कहें तो, तर्क यह है कि हर मामले में प्रश्न यह होता है कि क्या वह वर्गीकरण, अनुच्छेद 14 में निहित समानता के सिद्धांत का उल्लंघन करता है। इसलिए, क्या एक पंजीकृत फर्म, एक लिमिटेड कंपनी और एक व्यक्ति में समान विशेषताएं हैं, यह संविधान के अनुच्छेद 14 की व्याख्या का प्रश्न है।

विरोधी दलीलों की वैधता पर विचार करने से पहले, यह पता लगाना उचित होगा कि हाई कोर्ट में असल में कौन सा सवाल उठाया गया था और उस पर हाई कोर्ट ने क्या फ़ैसला दिया था। सोसाइटी की ओर से हाई कोर्ट में यह दलील दी गई थी कि नियम 4-47 के तहत, लाइसेंस सिर्फ़ किसी ऐसे व्यक्ति या फ़र्म को ही जारी किया जा सकता है जो पार्टनरशिप एक्ट के तहत रजिस्टर्ड हो, न कि किसी ऐसे कॉर्पोरेशन को जो को-ऑपरेटिव सोसाइटीज़ एक्ट या किसी अन्य तरीके से रजिस्टर्ड हो; और इसलिए, यह नियम, अपने स्वभाव से ही भेदभावपूर्ण होने के कारण, संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है। अपीलकर्ताओं की ओर से पेश हुए विद्वान एडवोकेट-जनरल ने यह तर्क दिया कि संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत तर्कसंगत वर्गीकरण की अनुमति है, और विधायिका ने विवादित नियम को इसी आधार पर बनाया है, जिसका उद्देश्य जनता के हितों की रक्षा करना है। हाई कोर्ट ने, विरोधी दलीलों पर विचार करने के बाद, यह राय व्यक्त की कि उक्त नियम वर्गीकरण के किसी भी तर्कसंगत आधार पर आधारित नहीं था, और चूंकि एक कॉर्पोरेशन को मनमाने ढंग से चुनकर उसके साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार किया गया था, इसलिए विवादित नियम संविधान के समानता के सिद्धांत का उल्लंघन करता है। अपीलकर्ताओं ने इस कोर्ट में दायर अपनी विशेष अनुमति याचिका में, हाई कोर्ट के निष्कर्ष की सत्यता पर सवाल उठाया। उन्होंने यह दावा किया कि उक्त नियम तर्कसंगत वर्गीकरण पर आधारित था, और इसलिए इसे संविधान के अनुच्छेद 14 के विपरीत मानकर रद्द नहीं किया जा सकता। अन्य आधारों पर, उन्होंने इसी बात को विस्तार से समझाया, और ऐसा करके उन्होंने दोनों वर्गों की अलग-अलग विशेषताओं को सामने लाने का प्रयास किया, जो वर्गीकरण के लिए

एक समझदारी भरा आधार प्रदान करती हैं। उन्होंने अपील में अपने द्वारा उठाए जाने वाले प्रश्न को स्पष्ट रूप से इस प्रकार प्रस्तुत किया:

आधार iv: "उपर्युक्त नियम 4-47 (मोटर वाहन नियमों का) उचित वर्गीकरण पर आधारित है, और यह पूर्णतः अधिकार-क्षेत्र के भीतर तथा वैध है (और था भी); अतः इसे भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के प्रतिकूल होने के आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता।"

आधार vi: "एक कॉर्पोरेट निकाय और साझेदारी अधिनियम के प्रावधानों के तहत पंजीकृत साझेदारी के बीच एक स्पष्ट अंतर है, और ये अंतर के बिंदु वर्गीकरण के लिए एक बोधगम्य आधार प्रदान करते हैं। माननीय उच्च न्यायालय ने केवल अंतर के एक बिंदु का उल्लेख किया है और अंतर के अन्य बिंदुओं की अनदेखी की है, तथा उपर्युक्त नियम 4-47 को रद्द करने में त्रुटि की है।"

आधार viii: "नियम 4-47 को उस समय की स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए बनाया गया था। परिवहन के मामले में सहकारी समितियों और निगमों को लाइसेंस या परमिट देने के लिए उपयुक्त संस्थाएँ नहीं माना गया था। यह वर्गीकरण तर्कसंगत और उचित है। इस नियम के दायरे से कृत्रिम व्यक्तियों को बाहर रखना स्वाभाविक है और इसमें कोई भेदभाव नहीं है।"

अन्य आधार केवल उक्त आधारों का ही और स्पष्टीकरण हैं। अपने मामले के विवरण के भाग II में, अपीलकर्ताओं ने निम्नलिखित कथन कहा है:

अब यह भली-भांति स्थापित हो चुका है कि यद्यपि अनुच्छेद 14 वर्ग-विशेष के लिए कानून बनाने पर रोक लगाता है, तथापि यह कानून बनाने के प्रयोजन से किए गए युक्तिसंगत वर्गीकरण पर रोक नहीं लगाता।

उत्तरदाताओं ने अपने केस के बयान में, उक्त कानूनी स्थिति को स्वीकार किया, लेकिन इस बात का विरोध किया कि इसमें कोई 'उचित वर्गीकरण' था। इसलिए यह स्पष्ट है कि शुरू से लेकर अंत तक, संविधान के अनुच्छेद 14 की व्याख्या के संबंध में पक्षों के बीच कभी कोई विवाद नहीं रहा; बल्कि उनका विवाद केवल इस प्रश्न पर केंद्रित था कि क्या विवादित नियम 'उचित वर्गीकरण' की कसौटी पर खरा उतरता है।

इन परिस्थितियों में, क्या अपीलकर्ताओं को संविधान के अनुच्छेद 132(2) के तहत विशेष अवकाश प्रदान किया जा सकता है? अनुच्छेद 132(2) इस प्रकार है:

> "जहाँ उच्च न्यायालय ने ऐसा प्रमाण पत्र देने से इनकार कर दिया है, वहाँ उच्चतम न्यायालय, यदि वह इस बात से संतुष्ट है कि मामले में संविधान की व्याख्या से संबंधित

विधि का कोई सारवान प्रश्न अंतर्ग्रस्त है, तो ऐसे निर्णय, डिक्री या अंतिम आदेश के विरुद्ध अपील करने के लिए विशेष अनुमति प्रदान कर सकता है।"

अनुच्छेद 132 के खंड (2) के तहत, विशेष अनुमति देने की कोई गुंजाइश नहीं है, जब तक कि दो शर्तें पूरी न हो जाएं: (i) मामले में संविधान की व्याख्या से संबंधित कानून का कोई प्रश्न शामिल होना चाहिए; और (ii) उक्त प्रश्न कानून का एक सारवान प्रश्न होना चाहिए। इस अनुच्छेद का मूल सिद्धांत यह है कि संविधान की व्याख्या करने का अंतिम अधिकार सर्वोच्च न्यायालय के पास ही होना चाहिए। इसी उद्देश्य से, इस अनुच्छेद को अनुच्छेद 133 और 134 के तहत लगाई गई अन्य सीमाओं से मुक्त रखा गया है, और ऐसे मामले में अपील का अधिकार अत्यंत व्यापक रूप से प्रदान किया गया है–भले ही मामले की कार्यवाही की प्रकृति कुछ भी हो–जिसमें केवल संविधान की व्याख्या से संबंधित कानून का कोई सारवान प्रश्न शामिल हो।

किसी प्रावधान की व्याख्या का क्या अर्थ है? व्याख्या वह तरीका है जिससे किसी शब्द का सही भाव या अर्थ समझा जाता है। व्याख्या का प्रश्न तभी उठ सकता है जब किसी प्रावधान पर दो या अधिक संभावित अर्थ लगाने की कोशिश की जाए–एक पक्ष एक अर्थ सुझाए और दूसरा पक्ष कोई अलग अर्थ। लेकिन जहाँ पक्ष किसी प्रावधान की सही व्याख्या पर सहमत हों या उस संबंध में कोई प्रश्न न उठाएँ, वहाँ यह मानना संभव नहीं है कि इस मामले में संविधान की व्याख्या से संबंधित कोई कानूनी प्रश्न शामिल है। अनुच्छेद 14 की व्याख्या के आधार पर, इस न्यायालय के निर्णयों की एक श्रृंखला ने वर्गीकरण के सिद्धांत को विकसित किया। जैसा कि हमने बताया है, कार्यवाही के किसी भी चरण में, न तो अनुच्छेद 14 की व्याख्या की शुद्धता पर और न ही वर्गीकरण के सिद्धांत को नियंत्रित करने वाले सिद्धांतों पर किसी भी पक्ष द्वारा प्रश्न उठाया गया है। वास्तव में, उक्त सिद्धांत को स्वीकार करते हुए, अपीलकर्ताओं ने यह तर्क दिया कि नियम के तहत एक वैध वर्गीकरण किया गया था, जबकि प्रतिवादियों ने इसके विपरीत तर्क दिया। विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल ने पहली बार हमारे समक्ष यह तर्क दिया कि यह अपील समानता के सिद्धांत का एक नया पहलू उठाती है, अर्थात्, क्या एक कृत्रिम व्यक्ति और एक प्राकृतिक व्यक्ति में समानता खंड के अर्थ के भीतर समान गुण होते हैं, और इसलिए, इस मामले में संविधान की व्याख्या का प्रश्न शामिल है। यह तर्क, यदि हम ऐसा कह सकें, तो उसी बात को एक अलग रूप में प्रस्तुत करता है। यदि इसका विश्लेषण किया जाए, तो इस तर्क का सार केवल इतना है: चूंकि एक कृत्रिम व्यक्ति और एक प्राकृतिक

व्यक्ति में अलग-अलग गुण होते हैं, इसलिए उनके बीच किया गया वर्गीकरण वैध है। यह तर्क संविधान के अनुच्छेद 14 की कोई नई व्याख्या नहीं सुझाता, बल्कि केवल उस नियम को वर्गीकरण के सिद्धांत के दायरे में लाने का प्रयास करता है। इसलिए, हम यह निर्णय देते हैं कि इस मामले में उठाया गया प्रश्न संविधान की व्याख्या से संबंधित कोई कानूनी प्रश्न नहीं है।

यह मानते हुए कि यह मामला संविधान की व्याख्या से संबंधित कानून का कोई प्रश्न उठाता है, क्या यह कहा जा सकता है कि उठाया गया प्रश्न अनुच्छेद 14 के खंड (2) के अर्थ के भीतर कानून का एक 'सारवान प्रश्न' है? इस पहलू पर संघीय न्यायालय द्वारा 'टी. एम. कृष्णस्वामी पिल्लई बनाम गवर्नर जनरल इन काउंसिल'[1] मामले में विचार किया गया था। वह निर्णय 'भारत सरकार अधिनियम, 1935' की धारा 205 के प्रावधानों पर आधारित था। उस धारा का मुख्य भाग इस प्रकार है:

> धारा 205: "(1) किसी उच्च न्यायालय के किसी भी निर्णय, डिक्री या अंतिम आदेश के विरुद्ध संघीय न्यायालय में अपील की जा सकेगी, यदि उच्च न्यायालय यह प्रमाणित कर दे कि इस मामले में इस अधिनियम या इसके अधीन जारी किसी 'ऑर्डर इन काउंसिल' की व्याख्या से संबंधित विधि का कोई सारवान प्रश्न अंतर्ग्रस्त है।"

मद्रास हाई कोर्ट ने एक सर्टिफिकेट दिया कि इस केस में गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया एक्ट, 1935 के सेक्शन 240(3) के मतलब से जुड़ा एक ज़रूरी कानूनी सवाल था। इस एक्ट के सेक्शन 240(3) के तहत, कोई भी व्यक्ति जो भारत में क्राउन की सिविल सर्विस का मेंबर था या भारत में क्राउन के तहत कोई सिविल पोस्ट पर था, उसे तब तक नौकरी से नहीं निकाला जा सकता या रैंक में कम नहीं किया जा सकता, जब तक उसे उसके बारे में की जाने वाली कार्रवाई के खिलाफ कारण बताने का सही मौका न दिया जाए। हाई कोर्ट ने, मिले तथ्यों के आधार पर, यह माना कि अपील करने वाले को उस सेक्शन के मतलब के अंदर कारण बताने का सही मौका दिया गया था, लेकिन उसने गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया एक्ट, 1935 के सेक्शन 205(1) के तहत

एक सर्टिफिकेट दिया। उस केस के हालात में सर्टिफिकेट जारी करने के सही होने पर बात करते हुए, कोर्ट की ओर से बोलते हुए, जस्टिस ज़फ़रउल्ला खान ने पेज 2 पर साफ और साफ़ तौर पर कहा:

> "हमारे सामने यह ज़ोर दिया गया कि इस केस में एक्ट के सेक्शन 240 के सब-सेक्शन (3) के इंटरप्रिटेशन से जुड़ा एक सवाल था। इस केस के पोज़िशन के लिए उस सब-सेक्शन के इंटरप्रिटेशन पर किसी गाइडेंस की ज़रूरत हो सकती थी, जहाँ तक इस कोर्ट का सवाल है, वह गाइडेंस सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट फॉर बुइलिया बनाम आई.एम. लाल [(1945) F.C.R. 103] में अपने जजमेंट में दिया गया था। बाकी एक सिंपल फैक्ट का सवाल था। हमारे जजमेंट में इस केस में कॉन्स्टिट्यूशन एक्ट के इंटरप्रिटेशन के बारे में कोई 'ज़रूरी कानूनी सवाल' शामिल नहीं था, जो एक्ट के सेक्शन 205(1) के तहत सर्टिफिकेट का बेसिस बन सकता था।

संविधान के आर्टिकल 14 की व्याख्या के सवाल पर इस कोर्ट ने बुधन चौधरी बनाम बिहार राज्य[1] मामले में उस आर्टिकल का सही मतलब और दायरा इस तरह समझाया:

> "अब यह अच्छी तरह से साबित हो चुका है कि आर्टिकल 14 क्लास लेजिस्लेशन पर रोक लगाता है, लेकिन यह लेजिस्लेशन के मकसद से सही क्लासिफिकेशन पर रोक नहीं लगाता है। हालांकि, सही क्लासिफिकेशन का टेस्ट पास करने के लिए दो शर्तें पूरी होनी चाहिए, यानी, (i) क्लासिफिकेशन एक ऐसे समझने लायक अंतर पर आधारित होना चाहिए जो एक साथ ग्रुप किए गए लोगों या चीज़ों को ग्रुप से बाहर रखे गए लोगों से अलग करता हो और (ii) उस अंतर का उस मकसद से एक सही रिश्ता होना चाहिए जिसे उस कानून से हासिल करना है। क्लासिफिकेशन अलग-अलग आधारों पर आधारित हो सकता है: यानी, ज्योग्राफिकल, या चीज़ों या कामों या इसी तरह के आधार पर। ज़रूरी यह है कि क्लासिफिकेशन के आधार और जिस एक्ट पर विचार किया जा रहा है, उसके मकसद के बीच एक कनेक्शन हो।

[1] [1955}1 एस.सी.आर. 1045, 1049.

यह केवल उस कानून का पुनःकथन है जिसे इस न्यायालय ने चिरंजीत लाल चौधरी बनाम भारत संघ[1] और अन्य बाद के निर्णयों में प्रतिपादित किया था। उक्त सिद्धांतों की इस न्यायालय के हाल के निर्णयों में राम कृष्ण डालमिया बनाम जस्टिस तेंदुलकर[2] और मोहम्मद हनीफ कुरैशी बनाम बिहार राज्य[3] में पुष्टि की गई थी। उक्त निर्णय को देखते हुए संविधान के अनुच्छेद 14 के प्रावधानों के संबंध में वर्गीकरण के सिद्धांत की नई व्याख्या करने की कोई गुंजाइश नहीं है। वर्गीकरण के संदर्भ में अनुच्छेद 14 की व्याख्या इस देश के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अंतिम रूप से तय की जा चुकी है और संविधान के अनुच्छेद 141 के तहत वह व्याख्या भारत के क्षेत्र के सभी न्यायालयों के लिए बाध्यकारी है। उच्च न्यायालय द्वारा जो किया जाना बाकी था, वह केवल उस व्याख्या को उसके सामने मौजूद तथ्यों पर लागू करना था। इसलिए, कानून का कोई महत्वपूर्ण प्रश्न नहीं उठ सकता जहां उस कानून पर इस न्यायालय द्वारा अंतिम रूप से और अधिकारपूर्वक निर्णय दिया जा चुका है।

नतीजतन, हम शुरुआती आपत्ति को स्वीकार करते हैं और खर्च के साथ अपील खारिज करते हैं।

अपील खारिज की जाती है।

यह अनुवाद सुश्री लीना मुखर्जी, पैनल अनुवादक के द्वारा किया गया।

[1] [195ई] एस.सी.आर. 869. [2] [1959] एस.सी.आर. 279.

[3] [1959) एस.सी.आर. 629.